पद संख्या – 36

भौंहिं, निरमोहि, लग्यो मो ही हौं सु आज।

भनौं चाहौं छाँड़ें नहीं, छाँड़ें छवाइ॥ ३६॥

प्रसंग सहित व्याख्या

यह पद श्रृंगार रस से संबंधित है। इसमें नायिका अपने प्रिय (निरमोही नायक) से शिकायत करती हुई प्रेम की गहनता को व्यक्त कर रही है।

नायिका कहती है –

हे निरमोही (निर्दयी प्रियतम)! आज तो तुम मेरे मन में इस प्रकार बस गए हो कि मैं चाहकर भी तुम्हें अपने हृदय से निकाल नहीं सकती। मैं बार-बार सोचती हूँ कि तुम्हें भूल जाऊँ, तुम्हारा स्मरण छोड़ दूँ; परंतु तुम्हारी छवि (सुंदर रूप) मेरे हृदय से अलग नहीं होती।

भावार्थ

नायिका के हृदय में प्रिय का रूप इतनी गहराई से अंकित हो गया है कि वह उसे भुलाने का प्रयास करती है, पर सफल नहीं होती। यहाँ प्रेम की तीव्रता और स्मृति की अनिवार्यता का चित्रण है।

- "निरमोहि" शब्द में उलाहना है – प्रिय उसे प्रेम में तड़पा रहा है।
- "छाँड़ें नहीं" से नायिका की असहायता व्यक्त होती है।
- प्रिय की "छवाइ" (छवि) उसके मन में स्थायी रूप से बस गई है।

काव्यगत विशेषताएँ

- श्रृंगार रस (विप्रलंभ) की प्रधानता।
- उलाहना भाव की अभिव्यक्ति।
- भाषा में कोमलता और भावुकता।
- संक्षिप्त शब्दों में गहन प्रेमानुभूति।

सार

यह पद प्रेम की उस अवस्था को दर्शाता है जहाँ प्रिय की स्मृति मन पर पूर्ण अधिकार कर लेती है। नायिका चाहकर भी प्रिय को भुला नहीं पाती — यही इस पद का मुख्य भाव है।

पद संख्या – 41

पद (संशोधित पाठ):

"जगु जनायो जिहिं सकलु, सो हरि जान्यो नाहिं।

ज्यों आँखिन सब देखिए, आँखि न देखी जाहिं॥ ४१॥"

प्रसंग सहित व्याख्या

यह पद भक्तिरस से संबंधित है। कवि यहाँ ईश्वर की सर्वव्यापकता और मनुष्य की अज्ञानता को बड़े सरल और सुंदर उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हैं।

कवि कहते हैं—

जिस परमात्मा (हरि) ने इस समस्त जगत को उत्पन्न किया और जो सबको प्रकाशित करता है, उसी को मनुष्य नहीं पहचान पाता।

जैसे हम अपनी आँखों से सारी वस्तुओं को देखते हैं, परंतु आँख स्वयं दिखाई नहीं देती; उसी प्रकार ईश्वर सबमें विद्यमान होकर भी प्रत्यक्ष नहीं दिखते।

भावार्थ

- परमात्मा ही संसार के कर्ता और ज्ञाता हैं।
- वे हर वस्तु में व्याप्त हैं, परंतु अज्ञानवश मनुष्य उन्हें पहचान नहीं पाता।
- आँख के उदाहरण द्वारा यह समझाया गया है कि जो देखने का साधन है, वही स्वयं दृष्टि का विषय नहीं बनता।
- इसी प्रकार ईश्वर अनुभूति का विषय हैं, केवल बाह्य दृष्टि से नहीं दिखते।

काव्यगत विशेषताए

1. उदाहरण अलंकार – आँख का उदाहरण देकर भाव स्पष्ट किया गया है।
2. सरल और प्रभावशाली भाषा – कम शब्दों में गूढ़ दर्शन।
3. भक्तिरस की अभिव्यक्ति।
4. गहन दार्शनिक विचार को सहज रूप में प्रस्तुत किया गया है।

सार

इस पद में कवि बताते हैं कि ईश्वर सर्वव्यापी होते हुए भी सामान्य दृष्टि से दिखाई नहीं देते। उन्हें देखने के लिए बाहरी आँख नहीं, बल्कि आंतरिक अनुभूति की आवश्यकता होती है।

पद संख्या – 46

“रससिंगार-मंजन किए, कंजन-भंजन बैन।

अंजन-रंजन बिनु खंजन-गंजन नैन॥ ४६॥”

प्रसंग सहित व्याख्या

यह पद श्रृंगार रस से संबंधित है। इसमें कवि ने नायिका के नेत्रों की सुंदरता और प्रभाव का अत्यंत कलात्मक वर्णन किया है।

कवि कहते हैं कि नायिका के नेत्र ऐसे हैं मानो वे श्रृंगार-रस में मँजे हुए हों। उनके वचन (बैन) कमल (कंजन) का भी मान भंग कर देते हैं, अर्थात् उनकी शोभा कमल से भी अधिक है।

उसकी आँखें बिना अंजन (काजल) लगाए ही इतनी आकर्षक और मनोहर हैं कि वे खंजन पक्षी की सुंदरता को भी मात देती हैं।

शब्दार्थ

- रससिंगार-मंजन किए – श्रृंगार-रस में स्नान किए हुए, अत्यंत सुसज्जित।
- कंजन-भंजन बैन – कमल को भी पराजित करने वाले नेत्र/वचन।
- अंजन-रंजन बिनु – काजल लगाए बिना ही।
- खंजन-गंजन नैन – खंजन पक्षी को भी लज्जित करने वाले नेत्र।

भावार्थ

नायिका के नेत्र स्वाभाविक रूप से इतने सुंदर हैं कि उन्हें सजाने की आवश्यकता नहीं है। वे बिना किसी प्रसाधन के ही कमल और खंजन पक्षी जैसी सुंदर वस्तुओं को भी मात देते हैं।

यहाँ कवि ने नायिका के सौंदर्य की अतिशयोक्ति के माध्यम से उसकी अद्‌वितीय छवि प्रस्तुत की है।

काव्यगत विशेषताएँ

1. अनुप्रास अलंकार – 'रससिंगार', 'मंजन', 'कंजन', 'भंजन', 'अंजन', 'रंजन', 'खंजन', 'गंजन' शब्दों में ध्वनि-सौंदर्य।
2. उपमा और रूपक – नेत्रों की तुलना कमल और खंजन से।
3. श्रृंगार रस की प्रधानता।
4. स्वाभाविक सौंदर्य का प्रभावशाली चित्रण।

सार

इस पद में कवि ने नायिका के नेत्रों की अलौकिक सुंदरता का वर्णन करते हुए बताया है कि वे बिना श्रृंगार के ही संसार की सुंदर वस्तुओं को पराजित कर देते हैं।

पद संख्या – 51

"दीरघ साँस न लीजिए, दुख सुख साँहि सोंहि।

दुई-दुई क्यौं करत है, दुइ दुइ सुख कबहूँ न होहि॥ ५१॥"

प्रसंग सहित व्याख्या

यह पद नीति-प्रधान और जीवन-दर्शन से संबंधित है। कवि मनुष्य को जीवन के सुख-दुख के विषय में संतुलित दृष्टि रखने की शिक्षा दे रहे हैं।

कवि कहते हैं—

अत्यधिक लंबी साँसें (गहरी आहें) मत भरो। जीवन में सुख और दुख दोनों साथ-साथ रहते हैं। जब दोनों एक ही ईश्वर की देन हैं, तो उन्हें अलग-अलग क्यों मानते हो?

मनुष्य अक्सर चाहता है कि केवल सुख ही सुख मिले, दुख न आए। परंतु यह संभव नहीं है। जहाँ सुख है, वहाँ दुख भी अवश्य आएगा।

भावार्थ

- जीवन में सुख और दुख एक दूसरे के पूरक हैं।
- केवल सुख की इच्छा करना व्यर्थ है।
- विपत्ति में अत्यधिक शोक करना उचित नहीं, क्योंकि यह जीवन का स्वाभाविक नियम है।
- धैर्य और समत्व ही उचित मार्ग है।

काव्यगत विशेषताएँ

1. नीति रस की प्रधानता।
2. जीवन-दर्शन का सरल और व्यावहारिक संदेश।
3. पुनरुक्ति और प्रश्नोक्ति का सुंदर प्रयोग – "दुई-दुई क्यौं करत है"।
4. भाषा सरल, भाव गूढ़।

सार

इस पद में कवि समझाते हैं कि सुख और दुख जीवन के अभिन्न अंग हैं। केवल सुख की कामना करना और दुख में अत्यधिक व्याकुल होना उचित नहीं। मनुष्य को समभाव से जीवन स्वीकार करना चाहिए।